समीक्षावादी चित्रों की पहचान एवं विशेषताएँ

डॉ० अमृत लाल
एसोसिएट प्रोफेसर, ललित कला विभाग
मेरठ कॉलेज, मेरठ
ईमेलः amritlal231972@gmail.com

Reference to this paper should be made as follows:

डॉ० अमृत लाल

समीक्षावादी चित्रों की पहचान एवं विशेषताएँ

Artistic Narration 2022, Vol. XIII, No. 1, Article No. 5 pp. 26-33

https://anubooks.com/artistic-narration-no-xiii-no-1-jan.-june-2022/

सारांश

"समीक्षावाद एवं समीक्षावादी चित्रकारों में पाश्यात्य या अन्य कला शैलियों का अनुकरण करने के बजाय अपने स्वदेशी मौलिक ढंग से समाज में व्याप्त समस्याओं को देखने तथा उन्हें चिन्हित करने को सजग रहते है। इन चित्रों की बिम्बयोजना बजाय एक फैशनेविल अमूर्तता व चमत्कारी के, एक सम्प्रेषण–बोध की ओर प्रेरित है। इस समय जब कला केवल धनपतियों एवं हाथी दंत मीनार में विलास की सामग्री बनती जा रही है, समीक्षावाद चित्र एवं चित्रकार सामान्य जन जीवन वर्तमान दाख्ण–अवस्था, दिशा और दशा तथा सामाजिक संकट के प्रति उसे जागरूक करते है। मेरी हार्दिक शुभ कामना है कि समीक्षावादी कलाकार अपने देश व प्रदेश में चित्रकला के एक ऐतिहासिक नवचेतना के दिशा–निर्देशक बनें। समीक्षावाद ही भारत की जनवादी आधुनिक कला है।"

–डॉ० अमृत लाल

मुख्य शब्द

विषय–वस्तु, तकनीक, शैली, आकार, रंग, रूप–रेखाएँ, प्रतीक, अभिव्यंजना, व्यंग आदि।

विषय–वस्तु

समीक्षावादी कला को विषय–वस्तु प्रधान कला भी कहा जा सकता है क्योकि इसमें कलाकार एक विषय चुनकर सोच विचार कर अपने लक्ष्य के मुताबिक ऐसी रचना करता है कि उसका चित्र तथा उसकी व्यंजना साधारण आदमी को भी समझ में आये।

शिक्षा शास्त्रविद प्रोफेसर सत्यदेव सिंह ने गोरखपुर में समीक्षावादी कला प्रदर्शनी को देख कर कहा "हमारे आधुनिक समाज में जो बुराइयाँ घर कर गई है इनको बड़े मार्मिक ढंग से चित्रों में अभिव्यक्त किया गया है। यह चित्र सुधारवादी तथा आँख खोलने वाले है। इन चित्रों का विषय वस्तु वर्तमान युवा पीढ़ी में व्याप्त भ्रष्टाचारी प्रवृत्ति से लिया गया है। यदि इस भ्रष्टाचारी प्रवृत्ति को जल्दी नहीं रोका गया और सही दिशा नहीं दी गयी तो भारतीय समाज रसातल को चला जायेगा और राष्ट्र की अपूर्णीय क्षति होगी। मैं आशा करता हूँ ऐसे चित्रो को देश के कोने में प्रदर्शित किया जाना चाहिए ताकि वर्तमान समाज में व्याप्त असामाजिक, भ्रष्ट तथा गर्हित तत्वों का पर्दाफाश किया जा सके।'' समीक्षाओ कला विषय वस्तु को प्रमुखता देता है। विषय–वस्तु का चयन कलाकार अपने आस–पास के जीवन तथा समाज एवं उसकी मूल–भूत समस्याओ एवं परिस्थितियो से करता है।

समीक्षावादी कलाकार प्रोफेसर रामचन्द्र शुक्ल तो जन साधारण को जो राजनीति के समक्ष पराभूत है उसे व्यंग्यात्मक रचना में ढालकर खक्कर के पॉप आदर्शों का प्रयोग करते है। संतोष कुमार सिंह भी समान विषय वस्तु पर भव्यतापर्दूक भावोत्योजक–चित्रण करते है 'कार्यालय की कुर्सीपूजा'। बालादत्त पडि का एक चित्र कम से कम ऐसा है जिसमें आधुनिक शिक्षा की निःशेष (समस्त) अराजकता को प्रभावशाली ढंग से व्यक्ति किया गया है। किन्तु जितनी भी कृतियाँ है वे सीधी सामाजिक समीक्षा और एक वर्णी परिधि में रेखायित अनुभव है। गोपाल चतुर्वेदी के कार्य में थोड़ी कला है। यद्यपि व्यग्य सबल और सशक्त है। रघुवीर सेन धीर के चित्र बहुत ही चित्रात्मक है, जैतूनीहरे और गैरिक रंगों में कुछ सुन्दर चित्राग–विन्यास, वर्ग–छुरिका के द्वारा किये गये हैं। लेकिन अधिकृत सामाजिक उद्धरण–उदारणार्थ, आपातकाल के सम्बन्ध में अबोध गम्य या सूक्ष्य बचा रह जाता है।

तकनीकः–

समीक्षावादी कलाकार, कला के तकनीकी प्रयोग को उतना ही महत्व देते है जिसमें विचार तथा भाव को स्पष्टता प्राप्त हो। पाश्चात्य आधुनिक कला की भाँति वे साधन को ही साध्य नहीं मानना चाहते, जहाँ विचार तथा भाव गौण होकर मात्र रंगो. आकारों का सूक्ष्म सयोजन अथवा डिजाइन बना रहता है ऐसी कला मात्र सज्जा है अथवा कलाबाजी है, जिसका उपयोग मात्र क्षणिक मनोरंजन है। यही कारण है कि पारचात्य चश्मे वाले दर्शको को समीक्षावादी कला अकलात्मक लग सकती है और इसमें उन्हें चित्रात्मक सूक्ष्म गुणो– (पेन्टरली क्वालिटीज) की कमी देख सकती है। चित्रात्मक सूक्ष्म गुण की आकांक्षा रखने वाले कलाकार निश्चित ही ''कला–कला

के लिये हैं'' की उक्ति में रुचि रखते है। जिसे समीक्षावादी कलाकार महत्वपूर्ण नहीं समझता है। वह तो ''कला–समाज के लिये हैं'' के विचार में आस्था रखता है। जो कला मात्र कलात्मक, सूक्ष्म गुणों को महत्व देती है और सामाजिक तत्वों से रिक्त हो जाती है वह कभी जीवित नहीं रह सकती, न ही किसी के लिये हितकर हो सकती है। वह मात्र एक अति बौद्धिक व्यक्ति का मानसिक मनोरजन कर सकती है। समाज के लिये वह निरर्थक ही है। समीक्षावादी कलाकार सार्थक कला में विश्वास रखता है और सोद्देश्य रचना करता है।

समीक्षावादी कलाकार न तो अकला (Anti Art) में विश्वास करते है न कला को वे इस तरह तकनीक तथा माध्ययमों का खिलवाड़ या तमाशा बनाना चाहते है। समीक्षावादी कलाकार तकनीक तथा माध्यमों को वहीं तक महत्व देते है जहाँ तक वह भावो तथा विचारों को सरलता से प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करने में मददगार होते है। तकनीक को वे माध्यम समझते है, लक्ष्य नहीं। वैसे समीक्षावादी कलाकार कला के लिये किसी भी प्रकार का तकनीकी बन्धन स्वीकार नहीं करते। किसी भी तकनीक तथा माध्याम (Medium) का प्रयोग किया जा सकता है। वे कला में तकनीक तथा माध्यम को दूसरा स्थान देते है प्रथम स्थान विचार तथा भाव को देते है। विचार तथा भाव को अभिव्यंजना के लिये तकनीक तथा माध्यम चुने जा सकते है। मात्र तकनीकी खिलवाड़ तमाशा तथा बाजीगरी दिखाने के लिये नहीं। तकनीक वहीं तक उपयोगी है जहाँ तक वह भावो तथा विचारों की सरलता तथा स्पष्टता में सहायक है।

शैली (समीक्षावाद)

समीक्षावादी कला भारत में आधुनिक कला का प्रथम स्वदेशी आन्दोलन है। यह पाश्चात्य आधुनिक कला के आन्दोलनों से अपनी भिन्न पहिचान रखता है, यह न तो पाश्चात्य आधुनिक कला से प्रभावित है न ही उससे कोई प्रेरणा ग्रहण करता है। इसकी मूल प्रेरणा वर्तमान सामाजिक राजनैतिक, आर्थिक, वैचारिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियाँ है। इसका प्रमुख प्रयास भारतीय है। इसका प्रमुख प्रयास है भारतीय आधुनिक कला को पाश्चमी आधुनिक कला की परिपाटी से मोड़कर मौलिक पथ पर अग्रसर करना। कला को व्यक्तिवादी सीमा से निकाल कर समाजोन्मुख बनाना, रहस्यवादी जामें से निकाल कर उद्देश्य परक बनाना। अनावश्यक जटिलताओं से मुक्त कर एक सरल, स्पष्ट तथा प्रभावशाली भाषा का रूप देना। कला को वर्ग विशेष के अधिपत्य से मुक्त प्रभावशाली भाषा का रूप देना। कला को वर्ग विशेष के अधिपत्य से मुक्त कर सर्वसाधारण के लिये सुलभ कराना। कला की प्रदर्शनियों को बड़े–बड़े नगरों की सीमा से बाहर निकाल कर छोटे नगरों, कस्बो, ग्रामो मजदूर बस्तियों तक ले जाना और उनके उदबोधन का साधन बनाना। इस आन्दोलन का कोई राजनैतिक उद्देश्य नहीं है। बल्कि कला को सामाजिक जीवन का एक प्रमुख तथा प्रभावशाली अंग बनाना है। यह आन्दोलन इसलिये है कि यह एक सामूहिक प्रयास है कला को नई दिशा देने का।

इन कलाकारों का मुख्य लक्ष्य समीक्षा ही है इसलिए इन्होंने अपनी कला को 'समीक्षावादी' कहा है। प्रश्न यह उठता है कि क्या इससे पहले कलाकारो ने अपनी कला में समीक्षा को महत्व नहीं दिया। क्या इससे पहले कला में व्यंग्य को स्थान नहीं दिया गया था? क्या अन्य भारतीय कलाकारों ने पहले कभी अपने समाज या जीवन की समीक्षा अपनी कला के द्वारा हीं प्रस्तुत की है। पर इससे पहले कभी भी कलाकारों ने समीक्षा को अपना ध्येय नहीं माना। प्राचीन भारतीय कला ने सदैव इस सौन्दर्य अथवा आदर्श को प्रमुख माना। पश्चिम में भी सदैव इस सौन्दर्य, आदर्श अथवा यथार्थ को महत्त्व दिया गया। पश्चिमी आधुनिक कला तो क्रमशः आकारवादी (फार्मलिस्टः नियमनिष्ठ) होती चली गई या फिर आन्तरिक अभिव्यंजना को महत्त्व दिया जाने लगा। यही गति अधिकांशतः भारत में अब तक प्रचलित आधुनिक कला की भी रही है। कलाकार मुक्त होकर प्रयोगों के आधार पर नये आकार, नई रंग–योजना, नयी कल्पना अथवा नई अभिव्यंजना प्रस्तु करना चाहता है। किन्तु समीक्षाबादी कलाकारों का ऐसा आग्रह नहीं है। ये समीक्षा को ही प्रमुख मानते है, सौन्दर्य, आदर्श, भौतिक यथार्थ, आकार–सृजन अथवा अभिव्यंजना को गौण मानते हैं। यह कारण है कि इनके चित्र आज के आधुनिक शैली के चित्रों से बिल्कुल भिन्न दिखते हैं। प्रचलित आधुनिक–शैली के चित्र काफी कुछ अनुबूझे से होते है और उसमे या तो विषय वस्तु होता नहीं और हुआ भी तो पल्ले नहीं पड़ता। जबकि समीक्षावादी चित्रों में विषय वस्तु प्रमुख होता है और तुरन्त समझ में भी जाता है।

आकार

समीक्षावादी कलाकारों का उद्देश्य रंगो का संगीत प्रवाहित करना नहीं है। वे चित्रकला को दृश्यात्मक संगीत मान कर नहीं चलना चाहते, न अपने को संगीतकार मानते है। चाहे रंग का संगीत होता भी हो तो। यह काम संगीतकारों का हो सकता है। चित्रकला को सगीत मान लेने से कोई विशेष बात बनती नहीं दिखाई देती। यदि चित्रकला वहीं कुछ कर सकती है जो संगीत, तो चित्रकला की आवश्यकता ही क्या बैठकर मजे से संगीत ही क्यों न सुना जाय और और आनन्द लिया जाय? समीक्षावादी चित्रकार चित्रकला को ज्यामितिक (geometrical) गणित भी मान कर नहीं चलना चाहते, क्याकि वह काम गणितज्ञ कहीं अच्छी तरह से कर सकता है। और करता आया है हम चित्रकला को संगीत को चेरी बनाना चाहते है और न गणित की। यह खिलवाड़ पश्चिम के धनपतियों को ही शोभा दे सकता है जिनके पास पैसा है और अय्याशी का साधन है। वहाँ चित्रकला भी अय्याशी का साधन बन चुकी है। भारत ऐसा गरीब तथा विकासशील देश ऐसी अय्याशी में फँस कर कही का नहीं रहेगा न घर का न घाट का।

कुछ अरूपवादी चित्रकार Abatract Art को Apritual भी मानते है। स्वयं Abstract Art के जनक वासली कैडिस्की ने इस बात को प्रतिपादित किया था। अगर यह बात किसी माने में सही भी हो तो समीक्षावादी चित्रकार उससे प्रेरणा लेना उचित नहीं समझते क्योकि भारत तो सदियों से आध्यात्मवादी कला की खान रहा है, यदि किसी को प्रेरणा लेना है तो उससे ले।

हमे अध्यात्म कहीं से उधार लेने की जरूरत नहीं। यही कारण है कि समीक्षावादी कलाकार अरूपवाद या Abstract Art में कोई रुचि नही रखते, न अपने देश के लिये उसे उपयोगी समझते है। अगर हमें पुनः अध्यात्मवादी कला प्रस्तुत करना है तो हमारी प्राचीन कला समर्थ है हम उसकी भी पुनरावृत्ति नहीं करना चाहते।

रंग:–

भारत में आधुनिक काल में भारतीय कला का प्रथम आन्दोलन बंगाल स्कूल का था जो स्वर्गीय आचार्य अवनीन्द्र नाथ के नेतृत्व में तीसरे दशक में कलकत्ता से आरम्भ हआ था। बंगाल शैली के चित्रकार जलरंगों से वाश' तकनीक में चित्र बनाते थे और समीक्षावादी तेल, जल तथा टेम्परा रंग–विधि सभी का प्रयोग करते है। बंगाल शैली के चित्रकार बारीक रेखाओं तथा पारदर्शी रंगों के माध्यम से चित्र बनाते थे। समीक्षावादी मोटी रेखाओं तथा सपाट रंगो (Flat Colaur) का उपयोग करते है। बंगाल शैली बहुत कुछ आदर्शवादी थी किन्तु समीक्षावादी भावोत्तेजक शैली को अपनाते है। पश्चिमी कला जैसे जैसे अरूपवादी होती चली गई उनमें से जाने पहिचाने स्वरूप घटने लगे और मात्ररंग, रंगों के धब्बे अनबूझ आकार, निरर्थक रेखाओं तथा उबड़–खाबड़ 'टेक्सचर ही बच रहा, तब उसे अन्तराष्ट्रीय कला भाषा कह कर प्रचार किया जाने लगा क्योकि अब वह सबके लिये समान रूप, तथा सहज रूप वाली बन गई। जैसे एक लाल वृत्त रंग सारे संसार में भी लाल वृत्त ही दिखाई पड़ता है। इस तरह के चित्र सभी को एक समान रूप में दिखाई पड़ते है। क्योकि उनमें प्रतीको तथा बिम्बो का रूप नहीं होता। एक प्रकार लिये समान रूप से सार्थक अथवा निरर्थक हो गये। यह नहीं होता। एक प्रकार से यह कि सबके सार्थक अथवा निरर्थक हो गये। यहाँ वे कलाकार यह भूल गये कि अब उनमें चित्र सभी का समक्ष परिधि से एक समान बाहर भी हो गये। जब तक चित्रों में बिम्ब या प्रतीक थे वे कुछ न कुछ अर्थ रखते थे अब वे नितान्त अर्थहीन हो गये। समीक्षावादी कलाकारों की मान्यता है। कि यदि सभी देशों की कला का एक ही स्वरूप हो जाय तो वह कितनी नीरस तथा उबा देने वाली बन जायगी। कलाकृति मानव द्वारा निर्मित विभिन्न आकार रूप रंग वाले फूलो के बाग के रूप में ही शोभा देती है। उनकी एक रंग, एक आकार में ढ़ालना उसकी हत्या करना ही होगा। आधुनिक पाश्चात्य कला में रंग रेखा प्रस्तुत करने के अनेक तरीके दिखाई पड़ते है जैसे विभिन्न प्रकार के तुलिकाघातो (Brush Stroke) बिन्दुओं से चित्र बनाना (जैसे– प्वाइन्टिलिज्म') कैनवास पर विविध प्रकार के छोटे पतले मोटे व्रशो का विभिन्न ढंग से प्रयोग करके गीले पतले रंगों को ऊपर से गिरा कर वहा कर, चुआकर छिटका कर अथवा दीवार पर कैनवास टांग कर, दूसरे उस पर रंगों के छीटे मार कर जमीन पर कैनवस विछा कर किसी नंगी लड़की के शरीर पर विभिन्न रंग पोत कर, उसे कैनवास पर कलैया खिला कर कागज या कैनवास पर रंगीन कागज के टुकड़े चिपका कर, विभिन्न प्रकार की रंगीन वस्तुयें, कपड़े के टुकड़े बोरे के टुकड़े टीन के टुकड़े पेड़ों की छाले, कीले, बटन पेच, फलो के छिलके, तारों नट–बोल्ट, काँच, धातु– वालू,

पत्थर प्लास्टिक की रंगीन वस्तुये चिपका कर आदि। इससे भी आगे बनाना, उगीन सर्च–लाइटे' छोड़कर आसमान में चित्र बनाना नदी के बहाव में विभिन्न रंगो के कनस्तर उलट कर नदी की रंगीन धारा से चित्र बनाना, सूखे पाउडर वाले अनेक रंगों का गुब्बारा उड़ा कर चित्र बनाना खेत मैदान से पूरे क्षेत्र की अजीब ढंग से खुदाई करके, रंग फैला कर कलाकृति बनाने का दावा करना। क्या–क्या खिलवाड़ नहीं किये गये आधुनिक चित्रकला के नाम पर? यह संक्षेप में पश्चिमी कला की प्रगति जिसे मार्डन आर्ट (Modern Art) 'कन्टम्प्रेरी आर्ट (Contemporary Art) कहा जाता है यह है वहाँ कि तकनीक तथा नये माध्यमों की खोज और प्रयोग जिसे वहाँ वास्तव में अकला 'ऐन्टी आर्ट (Anti&Art) आन्दोलन कहा जाता है। इन्हीं की नकल करने की बात की जाती है। जब भारतीय कला को मार्डन अथवा 'कन्टेम्पोरेरी' बनाने की बात की जाती है। वही पर समीक्षावादी कलाकार तकनीक अथवा माध्यम को आवश्यकता से अधिक महत्व नहीं देता। तकनीक वहाँ तक उपयोगी है जहाँ तक वह मूल अभिव्यंजना को स्पष्ट करने में सहायक होती है। चित्रकला में सबसे अधिक महत्व 'अर्थ' तथा 'संदेश' को दिया जाता है। और चित्र में आवश्यकता से अधिक एक भी वस्तु आकार रंग अथवा अनावश्यक सज्जा की पदार्पण नहीं होने देते।

रूपरेखाएँः–

कुछ अरूपवादी चित्रकार, Abstract Art को Spiritual थी मानते है स्वयं Abstract Art के जनक वासली कैडिस्की ने इस बात का प्रतिपादित किया था। अगर यह बात किसी माने में सही भी हो तो समीक्षावादी चित्रकार उससे प्रेरणा लेना उचित नहीं समझते क्योंकि भारत तो सदियों से आध्यात्मवादी कला की खान रहा है, यदि किसी को प्रेरणा लेना है तो उससे ले। हमें अध्यात्म कही से उधार लेने की जरूरत नहीं। यही कारण है कि समीक्षावाद कलाकार अरूपवाद या Abstract Art में कोई रुचि नहीं रखते न अपने देश के लिये उसे उपयोगी समझते है। अगर हमे पुनः अध्यात्मवादी कला प्रस्तुत करना है, तो हमारी प्राचीन कला समर्थ है। हम उसकी भी पुनरावृत्ति नहीं करना चाहते। समीक्षावादी कलाकार चित्रकला को मानवीय भावाभिव्यंजना तथा आदान–प्रदान का माध्यम (Media) मानते है। माध्यम जितना ही भावाभिव्यंजना में समर्थ तथा सशक्त होता है उतना ही महत्वपूर्ण होता है, समाज के लिये। आकृतिमूलक (Figurative) कला सदियों से समाज में प्रचलित है और भावाभिव्यंजना में पूरी तरह समर्थ हैं, उसकी जगह पर एक अनबूझ कला Abstract Art वही चला सकते है, जो समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी नहीं जानते जो पूरी तरह व्यक्तिवादी है जो समाज से साक्षात्कार या संवाद करना ही नहीं चाहते या कहिये जो समाज के चेतन पर जीवीप्राणी है समीक्षावाद भारत की समाजवादी कला है।

प्रतीक और व्यंगः–

जिस समय बंगाल शैली काफी प्रचलित हो गई थी और राजा रवि वर्मा के चित्र छप कर हिन्दुस्तान भर में फैल चुके थे अमृता शेरगील पेरिस से कला सीरव कर भारत आई। उनके

ऊपर पहले से ही फ्रांस के आधुनिक कलाकार गोगा, मातिस, रुसो, मोग्लियानी आदि की कला शैली का प्रभाव पड़ा हुआ था। गोगा, वानगाग फैशनेबिल शहरी लोगों का चित्रण करने के बजाय ग्रामीण देशज तथा मेहनतकश मजदूरों तथा साधारण जनो का चित्रण आरम्भ कर चुके थे। अमृता शेरगिल ने लगभग प्रचलित पाश्चात्य शैली में भारतीय जन–जीवन, ग्रामीण महिलाये, पुरुषो मजदूरों तथा साधारण जनो का चित्रण आरम्भ किया था। बाद में उन्होंने भारत भ्रमण किया और प्राचीन भारतीय शैलियों के चित्रों से भी परिचय प्राप्त किया और कुछ भारतीय तत्वों को भी अपनाने की कोशिश की। उन्होने भी तैल चित्रण विधि अपनाई थी किन्तु उनकी शैली यथार्थवादियों से बिल्कुल उतनी ही हट कर थी जैसी गोगा तथा मातिस की।

समीक्षावादी चित्रकारों ने भी सामाजिक चित्रण अप किन्तु उसमे तथा अमृता शेरगिल में अन्तर है। अमृताशा समय के भारतीय जन–जीवन को यथावत् चित्रित करने के पद थी। उनकी दुर्दशा करुणा, व्यथा, क्रन्दन का सीधा साधा चित्रण। समीक्षावादी जन–जीवन का यथावत् चित्रण करने में रुचि नहीं लेते। वे आज के समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, शोषण, विद्रूपता, बेईमानी, कुटिलता आदि पर व्यंगात्मक प्रहार प्रतीकात्मक, संवेगात्मक शैली में करते है। उनकी शैली तथा तकनीक न तो गोगा से प्रभावित है न मातिस से, न ही रूसो तथा मोदिलियानी से। वे अपनी इच्छानुसार विषयोचित शैली तथा तकनीक में अपने चित्र बनाते है जो अमृता शेरगिल से बिल्कुल भिन्न है। समीक्षावादी आक्रोश की शैली है, अमृता शेरगिल की शैली करुणा प्रधान थी। अमृता शेरगिल अधिकांशतः चित्र माडेल बिठा कर बनाती थी, समीक्षावादी कल्पना से। अमृता शेरगिल का चित्र सयोजन अधिकांशतः यथार्थवादी ढंग का है, समीक्षावादी अपने विचार के अनुरूप चित्र संयोजन करते है। अमृता शेरगिल आकारों में तीसरा आयाम भी दिखाने पर प्रयास करती है समीक्षावादी मूरख्यतया दो आयामी समाज चित्रण करते है। अमृत शेरगिल स्वाभाविक ढंग से अपने चित्रों में कई आकृतिया तथा वस्तुये सयोजित करती है समीक्षावादी केवल उन्हीं आकृतियों तथा वस्तुओं को चित्रित करते है जो विषय के अनुसार आवश्यक है। अमृता शेरगिल का दृष्टिकोण यथार्थवादी था, समीक्षावादी कलाकारों का प्रतीकात्मक, व्यंगात्मक तथा विचार प्रधान है।

अभिव्यंजना

समीक्षावादी कलाकार भी कलाकार को अभिव्यंजना पर पाबन्दी नहीं चाहते। कला भी अभिव्यंजना का माध्यम है। जनतंत्र में जब सभी को अभिव्यंजना की आजादी है। तो कलाकार को भी होनी चाहिए और है, तभी तो समीक्षावादी कलाकार स्कुलकर, निर्भीकता से, अपनी बात अपने विचार तथा अपनी भावना की अभिव्यक्ति अपने चित्रों में कर रहे है, बल्कि समीक्षावादी कलाकार अपने चित्रों द्वारा वही अपना आक्रोश भी जाहिर कर रहे है जहाँ मानव की स्वतंत्रता, अथवा स्वतंत्र रहने के अधिकार छिनते दिखाई पड़ते है। वे इसी के चित्रण में विशेष रूचि लेते है जहाँ स्वतंत्र नागरिको की दुर्दशा की जा रही है और उसके खिलाफ

अपनी शक्तिशाली चित्र शैली में अपनी आवाज जन–जन तक सशक्त अभिव्यंजनात्मक शैली में पहुचने का प्रयास कर रहे है।

संदर्भ ग्रंथ

1. चतुर्वेदी, डॉ० गोपाल मधुकर. समीक्षा वाद 'एक कदम और आगे', से साभार।
2. भागों, प्राण नाथ. भारत की समकालीन कला (एक परिप्रेक्ष्य), से साभार।
3. शुक्ला, प्रो० राम चन्द. कला और आधुकिक प्रवृत्तियाँ, से साभार।
4. जोशी, डॉ० शेखर चद्र. आधुनिक चित्र कला का इतिहास, से साभार।